दिलके बोल.

पु. पां. गोखले.
कऱ्हाड.

मूल्य ७ आने

दिलके बोल.

एक जिम्मेदारी

मैं तुम्हारे ऊपर अेक जिम्मेदारी रखता हूँ। फेर उसका पारितोषिक भी तुमको मिलेगा। क्या, तुम मेरी समंजस लडकी हो न? तो समंजस व्यक्तिहीने जिम्मेदारी लेना चाहिये। तुम सब नन्हे–बडे बालबच्चे समजूतीसे चलें, माँको या दादाजीको ना सताअें और रास्ता सीधे सीधे काँटें, तो तुम्हारी योग्यता उतनीही बढेगी कलके संसारमें कारोबार करनेकी। साथ साथ मुझे भी समाधान मिलेगा कि खुदाने मुझे मेरी कंगालीमें भी तुम्हारे जैसे निर्मल और स्वाभिमानी बालकोंके हीरे-माणक दिये है। मगर मेरे सगेसोयरे विशेषकर तुम मेरे प्यारे लडके [और लडकियाँ भी] अगर किसीके लाचार होंगे, किसीकी दयापर चलेंगे, दूसरेके आयासपर अपनी जिन्दगी काटेंगे, मेरी तबियत बिलकुल जाअेगी। क्योंकि देशभक्ति [मेरी तो सही] दूसरेकी दया अपनानेकी दुकान नहीं है। दुसरेकी दयापर चलनेवाली जिन्दगी राष्ट्रका खम्बा नहीं हो सकती। कलका काल तुम्हारा है। उसको अपने मनसे, मगजसे और मर्दुमकीसे उज्वल रखना तुम्हारा ही कर्तव्य है। अिस पूर्तिकी तैय्यारिका मौका आज है। यह सब जान–बूझ–साचेकर हमने और बडे बुजूर्गने तुम्हारे नाम रख्खे है। अपने अपने नामको तुम सार्थकता देवें, अिसलिये कर्तव्यदक्षताकी जरूरत है। कर्तव्यदक्षता आती है आदतसे। खुली आँखें और

कान शिक्षा लेते हैं संसारसे । उस शिक्षाके साथ कुछ स्फूर्ति भी होती है कृतीके प्रयोगकी । मेरे वहाँ न होनेसे तुमको यह सन्धि मिलती भी है । क्या, तुम जिस सन्धिका फायदा नहीं उठायोगे ?

प्रणिपातपूर्वक शुक्रिया आदा करता हूँ ।

जीवन-संगिनीको सलाह !

अभी एक जिम्मेदारी है । आगले २८ मई रोज ६० वी बरसगाठ है वीर विनायकरायजी सावरकरकी । लौकिक समारोह अलौकिक रीतसे या ठाटबाटसे होगा ही । तो अपने बालबच्चेको समझाना चाहिये क्या आपकी योग्यता है । "तिकाल" कार शिवराम-पन्त करन्दीकरजीने सावरकरका जो आलोचनापूर्वक चरित्र लिखा होगा, उससे विशेष और उज्वलता आदि बालबच्चे समझें, तो अच्छा । पर यह कितने तक आसान है, मुझे माळूम नहीं । तो तुम्हारी जिम्मेदारी है उनको समझानेकी । मै कुछ सहाय्य देतां हूँ । पहले, यह स्पष्ट करना चाहता हूँ कि मतभेद, या मार्गभिन्नता, या योग्यताकी तफावत और पक्षभेद सावरकरजीको वन्दना करनेमें मुझे दगा नहीं देते । राष्ट्रमें जो कोई तेजस्वी, मनस्वी हो और राष्ट्रकी निस्वार्थी सेवा करे, मुझे वन्दनीय है । तो सावरकरजीकी बात क्या ? अलग है । बीसवी सदीका पहला दशक लोकमान्य तिलक और सावरकरजीका खास है । एक थे राजकीय असन्तोषके जनक, दूसरे थे उत्कट आविष्कार । दहशत-वादके संघटन होनेपर आपको दो "जन्मठेप" मिलीं । आन्तर्राष्ट्रीय कानूनकोभी आपने ढका दिया,

जब आप गिरफ्तारीसे समुद्रमें कूदकर फ्रान्सी किनारे तैर जा रहे। आपकी बुद्धिमत्ता अलौकिक, कर्तृत्व अचाट, त्याग वन्दनीय है राष्ट्र-सेवामें। आजकल वे "हिंदुराष्ट्रपति" बन रहे हैं। नहीं तो आपको क्या मंजूर नहीं कि– जो कोई हिंदुस्थनको मायभूमि या पुण्यभूमि मानता है, उसकी चरणसेवामें अपनी कमाई और जिंदगीका कुछ हिस्सा देता है, और मौतके बादभी अपनी हड्डी भारतमाताके चरण-सेवामें अर्पित होनेकी इच्छा रखता है, वह भारतीय है। उसका हिंदुस्थान है, चाहे वह हिंदु हो, या मुसलमिन, या पारसी, ईसाई या और। सुलोचन, बालबच्चे सावरकरजीको कृतांजली व्यक्त करें।

नाम क्यों रखते? माँबाप, पडोसी या बापदादे बालबच्चों को जो नाम देते है, वह उनकेलिये आदर्श हो रहता है। अपना अपना नाम सार्थ करो।

पिताजीकी कृपा.

पिताजी, मुझे याद है कि मेरे हाथसे आपकी सेवा नही हुई जैसी कर्तव्यनिष्ट पूतसे। मेरी राजकीय और सामाजिक रायभी बहोत बातोंमें आपकी रायसे खूब दूर है। इतना होकरभी आपने मुझे दूर नहीं रक्खा। लेकिन अिस बरसमें क्या हो चुका कि जिससे आपका दयामय दिल मुझसे बोलना नहीं चाहता। मैं क्या समझूँ? मेरे हाथसे कुछ गलती हुअी होगी तो विना आपके मुझे माफ करनेवाला कौन है? आपही मेरी माँ और पिताजी हैं। जो चरित्रक्रम मैने मुकर किया व आजतक निकाल चुका उसने आपको

न कपडेका, न खयाली– खुशहालीका न दूसरे उपभोगका मजाक दिया । मै जानता हूँ । मगर जेबमें पैसेकी पूरी न होकर भी स्वाभिमानी देशसेवाका व्रत ले और पालन कर सकता है आपका लडका, यह क्या आपको अभिमान नहीं, जिसकी वाहवा यहाँ और दूसरे वहाँ होती है और जिसने आपका सीधा बच्चा लोगोंका कलेजा माफक नेता बन सकता है । मैं अेक ही चाहता हूँ. आपके आशीश जिनसे मुझे बल आता है बालबच्चोंको आदर्शचरित्र रखनेका, स्नेहसम्बन्धियोंको नमस्कार करनेका और विवेकस्पष्ट कर्तव्यनिष्ठासे जीवन सार्थ करनेका ।

धन्यवाद.

प्रिय और पूज्य पिताजी, चिरंजीवीं पूर्णप्राथमिका परीक्षा पासकर जिलेमे पहली आयी, यह है आपका आशीश । कहते हैं कि दादा और दादीके गुण नातनीमें आते हैं । सात्विकताका प्रकर्ष बालबच्चोंमें हो, अैसी अीश्वरचरणपें मेरी प्रार्थना है । आपके जैसे पिताजी हमारे मानदण्ड हैं । अिसलिये हमारी सब गल्तीगफलती जनता भुल जाती है । आपका आदर्श हमारे सामने खडा है । चिरंजीवीं जो पहिली आअी, उसका स्फुर्तिस्थान आपही है । हरअेक पग उठानेकेलिये बालबच्चोंको आप हैं उदाहरण । अतः हमारे आचार्य आपही हैं । सुना है चिरंजीविके यशसे उसकी शिक्षिकाअें अधिकतर प्रफुल्लित हुअी । क्यों न हो । वे ही उसकी बौद्धिक माताअें है न? आपके आचार्यत्वके साथ साथ शिक्विकाओंकोभी मै धन्यवाद देता हूँ । गुरुको माउली कहनेका रिवाज है । तो चिरंजीविका यश उसकी शिक्षिकाओंका यश है, मै साफ साफ मानता हूँ ।

मदद कौन करता है।

लोगोंकी आँखे जब अपनी हालचलपर रहती हैं, तब हम सीधे रास्तेसे चलते हैं। अफसोसकी बात अितनी ही है कि कब कब वे आँखे अीर्षासे रहतीं हैं। जो कोअी तुमको पूछे कि तुम्हारी मदद कौन करता है, उन्हे बोल दो "जिसकी है हिंमत जूदा, मददगार होता है उसका खूदा।" और भीतर जाँच करनेवाला कोअी हो, तो उसे कहो "हमारे यहाँ देशभक्ति लाचारीका मामला नहीं है। देशभक्त विनयशील होता ही है, पर वह स्वाभिमानी भी होता है। दुसरेकी दयासे देशभक्तीका डीम उठताभी नहीं। जिस दिन लाचारीका कालिमा आयेगा उस दिन राजकारणको हमारा पिता छोडेगा। क्यों कि स्वराज्य लाचार आदमीयोंसे चलता भी नहीं या मिलताभी नहीं। तथा, देशभक्तके बालबच्चे राष्ट्रके लाचार घटक हो भी नहीं सकते। होना पाप है।" अितने उत्तरसे जिसका समाधान न हो, उसे कह दो "हिन्दुस्थानके हितशत्रूके बगलवालोनेही हमारी मदद की है। क्यों कि हमारी देशभक्तीका तनिक डिंडिमसे बज रहे हैं वे अपने पेट या प्रतिष्ठाके लिये।" बाकी, अव्वल मित्रोंको मनही मन धन्यवाद दे देकर चूश रहनाही सीधा रास्ता है।

लोकमान्य.

महाराष्ट्रके चैतन्य और हिन्दोस्तानके राष्ट्रसुत्रधार महामना बाल गंगाधर तिलक थे प्रगाढ विद्वान, क्रांतिकारी संशोधक और अविचल आन्दोलक। आपके कट्टर शत्रुओंकी ओरसे भी आपको पूजा मिली है नैतिक धाराओंके बारेमें। आपका शील था सन्तके

जैसा । आपका मगज था तत्त्वज्ञका । आपकी राष्ट्रीय आकांक्षा थी रणधुरंधरकी । और आपकी स्वाभाविक प्रवृत्ति थी प्रगमनशील शिक्षककी । सीधी रहनसहन और उंची विचारधारा, थी लोकमान्य तिलक जीकें चारितका सूत्र । आप हिंदुस्तानके सामने अटूट, अबाध, स्वयंपूर्ण, संपूर्ण स्वातंत्र्य रखा था अविरत परिश्रमोंसे संपादन करनेका ध्येय । हरदम राष्ट्रका पग स्वातंत्र्यके लिए उठाना चाहते थे लोकमान्य । अिसलिए तिलकजीने जो जो आन्दोलन चलाया उसकी शुरू थी कानूनकी परिसीमापर । आन्दोलनसे आन्दोलन उठाते उठाते राष्ट्रसेवामें लोकमान्यजीको बन्दीवास, हद्दपारीतक सब सजाअें सहनी पडीं । उस तकलीफसे लोकमान्यजीका अिरादा था कि हिन्दोस्थानकी आम जनता बेडर बोले "स्वराज हमारा जन्मसिद्ध हक्क है और हम उसी लेंगे सही।" साथ साथ परसत्ताके सूत्रधार भी काँप उठें कि उन्हे कन्या-कुमारीसे काबूल–कन्दाहरतक और कराचीसे रंगूनतक सुखकी नींद मृगजलसी हो । तिलकजीनें कभीं नहीं कही रामकहानी कि लोग तैय्यार नहीं है । छोटेमोटे सब लोगोंसें अेकरूप होकर सबकी संवेदना लोकमान्यजीनें अपनाअी जिससे आप कहे गये "तेली-तम्बोलियोंके नेताजी" । ऊस उपाधियें लोकमान्य गर्व रखते थे । भावनाशील युवकों को बुद्धिवादका सबक देकर अपने यज्ञमय जीवनका आदर्श उनके सामने तिलकजीने रख दिया । नैष्ठिक कर्मयोगसे पगपग–पर स्वदेशसेवाकी दीक्षा दी । खुदाका और अपने अैतिहासिक तेज परंपराका अभिमान सिखाया । और सरकारपर हमला चढाया जिससें अप्रगट अपेक्षा थी कि सर-

कार लोकसेवा करे । पर प्रगट अपेक्षा थी कि फौरन लोग परकीय सरकारकी कुटिल नीति समझ लें । त्यागमय जीवन और चैतन्यकर त्याग अखंड राष्ट्रसेवामें लगा देकर लोकमान्य तिलक भारतमाताजीका तेज और अमर तिलक हो चुके हैं ।

श्री. जगन्नाथ शंकरशेठ.

जिसकी पुण्यतिथी आज श्रावण सुदी ८ रोज मानी जाती है, उस महाभागका जन्म १८०३ में हुआ था, जब महराटोंकी साम्राज्यसत्ता गिर जा रही थी और अंग्रजोंका आक्रमण पद पदसे कायम हो चुका था । लोग अिंग्रज सरकारसे और सरकार लोगोंसे सहकार नही करती थी क्योंकि परस्परके विश्वासकी जडें जमा नहीं हुअी थीं । उस संक्रमणावस्थामें श्रीमन् नाना शंकर शेठका अवतार जैसा मालूम हो रहा, वैसाही उनका आयुष्यक्रम । बचपनहीमें आपके पिताजीनें स्वर्ग सुधारा । धनमत्ता विपुल थी । यहाँ अेक संभव था नानाजी अेक नादान युवक बन जानेका । मगर आपनें परिश्रमोंसे मराठी, संस्कृत और आंग्रेजी भाषाअें आत्मसात् कीं और शरीर तगडा बनाकर कार्यका विस्तार फैलाया । कार्यका व्याप आपकी हयात कम नहीं कर सका, जैसी नामदार गोखलेजीकी । भिवंडीमें मची हुअी हिंदुमुसलमानोंकी दंगल और पंढरपूरमें श्रीविठ्ठलजीके दर्शनकी बंदी नानाजीनें अपनी चातुरीसे उखड दी । जिसमे आपके शीलका तथा न्यायबुद्धीका भी लोगोंको पता लग गया । सरकारने आपको " जस्टिस ऑफ दि पीस " तो बनाया सही । पर उस सन्मानके

अपेक्षा वे थे जनक बम्बअी असोसिएशनके, जिससे इंडियन नेशनल काँग्रेस निर्माण हुआ। सतीदहनकी बंदी, महिला शिक्षाकी शुरू बहुतेरी संस्थाओंके लिए द्रव्ययज्ञ, सोनापूरकी हिन्दु स्मशानभूमि अविचलित रखनेकी कोशीश इत्यादि इत्यादि नानाजी की कर्तबगारीके अैसे पहिलू है जिनके बारेमें कृतज्ञता अेकमात्र पूज्य है। नानाजीके समकालीन लोगोनें यह कृतज्ञता दिखाअी थी अेक नानाजीकी मूरत स्थापन करके। उस कालके महर्षि दादाभाई नौरोजीनेभी नानाजीको धन्यवाद दियेथे। अल्फिस्टनसाहबसे फ्रायरसाहबतक हरअेक गव्हर्नरके निःस्पृह सल्लागार थे नानाजी। फेरभी १८५७ के षड्यंत्रके दमनमें नानाजीपर अेक वारंट खडा था जो पीछे लेगया। "नृपतिजनपदानां दुर्लभः कार्यकर्ता" थे नानाजी जिनके चरणोपर कृतांजली समर्पण करना देशभक्तका काम है।

भारतकी गणेशपूजा.

कहते है कि परमात्मा त्रिगुणात्मक है। संहारकारी श्री शंकरकी तथा पालनहार श्री विष्णुकी पूजा जहाँ वहाँ नजर आती है। मगर ब्रह्मा की-निर्माणके देवताकी पूजा कहाँ है? पुष्कर तलाबके तटपर श्री ब्रह्माका एक मंदीर होता है और वहाँ उसका उत्सवभी बडे समारोहसे माना जाता है। मगर यह है केवल एक प्रतीक आम हिन्दोस्तानमें निर्माणके देवताका उत्सव होता है, जिसे श्री गणपतीका उत्सव कहनेकी प्रथा है। वेदमें "ब्रह्मणस्पतिः; गणनां पतिः" ऐसा है निर्देश इस निर्माणके देवताका। 'गणेश पुराण' की चिकित्सक समा-लोचना बतलाए कि यह निर्माणका देवता है खेतीका देवता

यानें जिंदगी सचेतन करनेके शास्त्रका देवता। उस देवताके उत्सवकी शुरू भाद्रपद सुदी ४ थी है। अब बरसात और उसके प्रसादका अंदाजा बराबर लग जाता है तेज मगजको। सरकारके जैसे अन्दाजपत्रक तन्दुरसा हो जाते है अब अनाजके निर्माणके बारेमें और मशागत—मेहनतकी सफलता जिसकी कृपासे देख पडती है, उस देवताका पूजन कृतज्ञासे होता ही है। पहले जीवन और पीछे सचेतन, दिमागदार या सौभाग्यमय जीवन है हरअेक आदमीकी आकांक्षा, चाहे संसारमें वह कहाँ भी हो। आजकल हिंदोस्तानी तो इसे जीमे जीगें लेता है। क्यों कि वह संसारमें गुलामीसे कंगालसा हो रहा है। लोकपूज्य तिलकजीनें हिन्दोस्तानी की आकांक्षाको राष्ट्रीय रूप दिया १८९६ में जब उन्होने सामूहिक जनसाधारणमें गणेशोत्सवकी प्रथा शुरू की। परवशतासे हिंदोस्तानकी अवस्था संहारमय बनचुकी थी आज भी वैसी है। तो विध्वंसनके पीछे निर्माणकी जरूरत है। निर्माणकी निगा भी कर्तव्य है जैसी पुराणी परंपराकी जो संजीवनी है उस भली क्रांतिकी राष्ट्रसेवा देशके जवान करें यह था आदेश लोकमान्यजीका, गणेशोत्सवकी सामूहिक प्रथामें। बलपर अधिष्ठित शस्त्रसंचालनहीसे विश्वशान्तिका संभव मालूम पडता है राजनीतिज्ञाको। अगर बन्धुभाव अपनी जडें जमा नहीं लेता, तो आत्मिक बलका निर्माण और प्रभाव नहींके बराबर है। अेक आक्रमणपर दुसरे अत्याचारका उतारा, उतारा तो हो नहीं सकता। बल्कि, असमाधानी आत्मकें नये शरीर धारण करके फेर झगडा मचाती है क्यों कि वे अमर है। तो हृदयका नूर पलट लेना अेकमात्र उपाय है शान्तिब्रह्मकी उपासनाका। आर्यसंस्कृतिका यह आदेश

सब राष्ट्र अपनामें, बन जायेगा संसार सनातन शान्तिका पवित्र मंदीर। महात्मा गांधीजीके प्रयत्न इसीलिये चल रहे है। अपनी संस्कृतिके फैलावसे शान्तिब्रम्हकी प्रस्थापना चाहता है हिंदोस्तान। तालीस कोटी जनगणोंका और संसारके सब धर्मोंका जनक हिंदोस्तान राष्ट्र—गणका पति, यानें नेता होना चाहता है, क्योंकि वही उसकी प्रतिष्ठा है। अपनी जन्मभूमीको जब उसकी प्रतिष्ठा उसके सुपूत और सुकन्यासें प्राप्त कर देंगे, तभी भारतका गणेशपूजन यथार्थ होगा!

गणपतीका ध्यान.

ग्रीक लोगोंका डीमीटर या रोमन लोगोंका सीरस, वैसाही हिंदुओंका गणपति है। वह है खेतीका देवता। शमी और दूर्वा उसे प्यार है। अितनाही नहीं। श्री शिवलिंगकी प्राप्ति रावनसे करनेके लिए वह किसान बन रहा था। फसलोंको पानी देते हुअे किसान, गणेशजीकी याद करके काम शुरू करते है। कहते है कि गण-पति सवार होता है आँखुपर। खेतके खेत बेचिराख करनेका दम आँखु रखता है। उसके वास्ते उसे काबूमें रखना खेतीके देवताका काम है। बालू, बाग आदि जंगलके जानवर खेतीके और खेतजानकरोंके दुस्मन है। उनके पारिपत्यके कारण गणपतिका शस्त्र है त्रिशूल। गणपति अपने हाथमें रखता है साप जो कभी कभी किसानोको इजा पहुंचाता है। गणपती भूखा है लड्डू या मोदकका जिसके सब घटक खेती देती है। गणपतीके है चार या ज्ञानेश्वरीमें दिये जैसे छः हाथ। यह दिखाता है कमसे कम दो या तीन

आदमी एक दिलसे काम करें तो खेती कुछ रूप लेती है। एकसो आठ नामोंसे गण-पतीकी संभावना होती है। मुस्लीमोंका अल्लाह ९९ नामोंसे मालूम होता है। सब नामोकी चिकित्सा बताएगी कि रोटीका सवाल पूरा करनेवाला देवता कैसा सुखकारी और दुखहारी है। उसके गलेमें मुक्ताकी माला है। यह है प्रतीक उत्तम खेतीका जो मोतीसा अनाज निर्माण करती है। गणपतीका लंबा पेट अव्वल अनाजकी कोठारीकी निशानी है। उसे सूक्ष्म नजरकी जरूरत है, जो गणपतीके न्हन्नी आँखोंसे प्रतीत होता है। बारीक आँखोंके साथ विशाल मस्तक भी यशस्वी खेतीको लगता है। गणपतीके ध्यानका यही अर्थ है। गणपती कह जाता है पूत पार्वती-पर्वतसे निकली हुई नदीका। पार्वती जो किनारेपर अपना मल रख देती है, वह अनाजका देनेवाला है संसारको।

महात्माजीकी महति.

जिस शान्तिब्रह्मकी उपासनाके लिए आजकल संसारमें उलथपुलथ हो रही है उसकी सिद्धी विना आत्मिक बलके कभी संभव नहीं। एक आक्रमणपर अत्याचारका दूसरा बदला लेनेसे दोनोभी आत्माऐं असंतुष्ट रहती है और पुनर्जन्म लेकर अपना झगडा मचा करती हैं। तो दिलका बदलही और दिलसे दिलजमाई एक मात्र मारग है शान्तिब्रम्हकी उपासनाका। आर्य संस्कृतीका यह आदेश सब राष्ट्रोनें अपनाना चाहिये जब ससारमें शान्ति अनन्त रहेगी। इसी कार्यके लिये महात्मा गांधीजीनें अपनी जिन्दगी मरतक कोशिस चलाई है। अपने दरिद्रनारायणकी सेवा उसकी जीवनीका स्वीकार

करके शुरू की। यही था आकर्षण मराठी नवजवानोंको खुले आँखोंसे महात्माजीके पगपगपर पग रखनेमे लोकमान्य तिलकजीके पश्चात्। राष्ट्रकी प्रगति करने–करानेवालोंको मराठी नौजवान हमेशा अपनी साथ दे रहे हैं, दे रहते है। जबतक राजनीति अेक राजाकी बाब थी, तबतक वारांगनाजैसी बहुरुपिणी रहनेका उसका अखत्यार था और उसे अध्यात्मकी जरूरी सिर्फ न्यायमन्दिरमें थी। पर जब राजनीति लोकशाहीमें परिणत होना चाहती है, तब बहुरूपिणी होकर भी उसे कुलवधू जैसी होना चाहिये। राजनैतिक आन्दोलनोंको आत्मिक पार्श्वभूमिकी आवश्यकता नामदार गोपाळ कृष्ण गोखले जैसे नेता मानते थे। गोखलेजीकी यही इच्छा महात्माजीनें पूरी की है अपनी अहिंसासे जिसपर निर्भर रही महात्माजीकी हरएक चढीबढी श्रेणी वह जंगलमे मंगल ठहरी हुअी कंगालोंकी कोठरीतक लोकमान्य तिलकजीका घोषनिनादित कर रही कि "स्वराज्य हमारा हक है और उसे हम अपनाअेंगे सही।" हिंदोस्तानकी लोकशक्तीका यह जागर संसारको चमका रहा और काँग्रेसको भी उस शक्तिसे अैसा ऊंचा स्थान मिला कि जो ब्रिटिश-साम्राज्यके प्रतिनिधीके बराबर था। गान्धी–इर्बिन–इकरार अेक अैतिहासीक घटना है जो महात्माजीकी पावनपदपंक्ति है। आगे, महात्माजीनें "चले जाव" तक दो आन्दोलन उठाये, जिनसे प्रान्ताधिपोंको रंगरूट भरती करनेके लिए गाँवगाँव घूमना घामना पडा। युद्धोत्तरभी अनेक योजनाकी रचाई होती है जिनमें गँवार जनता और दरिद्र नारायण सेवाका केंद्र है। महात्माजीकाही यह प्रभाव है। १९३१ में दूसरी

गोलमेज परिषदको काँग्रेसका अकमेव प्रतिनिधी गांधीजी थे और आपने हिन्दी मुस्लीमोंको " ब्लँक चेक " दिया था। जिन्होनें उसपर खलबली मचाई, उन्होनें ब्रिटिश प्रीमिअरके हाथ जातिनिर्णय सौपाया और उसका पश्चात्ताप भी किया। मगर महात्माजी और काँग्रेस मानती है कि वह हिंदुस्थानका सुपूत जो है हिंदुस्थानको अपनी पवित्र जन्मभूमि मानता है, चाहे वह हिन्दु हो या पारसी, ईसाई या मुसलमान। इसकेवास्ते जनाब जिनासे हिंदुस्थानकी आजादिके बारेमें गांधीजीनें बातचीत किया और कोई ज्यादह अधिकार मुस्लिम भाईओं को, जरूर हो, तो देता हि सही। भारतकी आझादी संसारकी आवश्यकता है। क्यों कि संसारकी शान्तिब्रह्मकी पूजा विना हिन्दोस्तानकी आझादीके सर्वथा असंभव है।

चतुराअी

बहुतेरे लोगोंकी पहचान है चतुराअी। संसारका वर्तमान जमाना चलानेमें जो दिलसाफ कोशिश उठाते हैं, उनकी विचार-धाराकी ठीक बराबरी रखना भी चतुराई है। अिस संसारमें कम-अकल रोनेवालोंको और दिलके दिलमें पागलपनहीकी मिरास सम्हालनेवालोंको कोअी प्रतिष्ठा नहीं मिल सकती। बरन नहीं मिले। उनपर मेहेरबानी की जाअे, हो सके, तो उन्हे मदद देकर जिन्दगीके प्रवाहमें उनका तैरना आसान किया जाये; मगर खुदका जीवन ऊँचा करनेकी अखंड स्फूर्ति उनसे नहीं मिलती। वह मिलती है उन महाभागोंसे जो अिस संसारको सच्चा जानकर होनेवाले हरअेक वास्तवका रहस्य और उसकी कीमत ठीक ठीक

तोल सकते हैं और जो संसारकी प्रगति संजीवन-चैतन्य शक्तिके ऊपर निर्भर मानते हैं। गअी हुअी संक्रांतिसे आगामी संक्रान्ति नजरकी विशालता देनेवाली होना चाहिये। खुदकी कर्तबगारी और खुदका परिवार संसारमें अकसाथ बढना चाहिये। जो जो सरस होगा, उसपर नजर अचूक देना आवश्यक है। जो जो कुछ उपयोगका हो, या जो जो आगामी कालका बीजारोपण हो, उसपर गरूडकी चालाखीसे ध्यान देना जरूरही है।

दूसरा सन्देश है ही क्या ?

जनताजनार्दनके प्रेम-वैभवके सामने, रास्तेकी मिट्टी माल्म पडते हैं सुनहरी मुगुट साम्राज्यशाहीके। मैं अखंड भीरवमँगा हूँ इसी प्रेमका जिसके जोशशे हवाल—हिलहिलीकी कोई परवाह नहीं। दिन-बे-दिन पसीना निकालनेवाली कोशिश या रोजगारीका मुशाहिरा दो आनेसेभी कम जिनके हाथोंमें आता है, उन हवालीदिल हिन्दोस्थानीओंके वास्ते स्वराज्य या स्वातंत्र्यका आन्दोलन है। उसकी जरूरत है संयम और नियमनकी। हर अेक बात नियमनसे होना चाहिये। और बाबतोंका कहा क्या अलाहिदा है! यही मेरा सन्देश है जो आप लोग मुझसे माँग रहे हैं। तेली तम्बोलिओंके नेताजी होकर हिन्दोस्तानी राजकीय असन्तोषके जनक, लोकमान्य तिलकजीनें जो सन्देश आप लोगोंको दिया है, जो सन्देश प्रतीत हुआ नामदार गोपाल कृष्ण गोखलेजीसे जिनकी छाया थी कीरत लोकपक्षीय राजनीतिज्ञकी विधिमंडलोमें, और दारिद्रनारायणकी अेक-

निष्ट सेवाकेवास्ते बॅरिस्टर मोहनदास करमचंद गांधीजीनें खुदही त्यागमय (यज्ञमय) जीवन स्वीकार करके जो संदेश कार्यकर्ताओंके सामने रक्खा है, उसीका आचारमें परिवर्तन अपना अेकमात्र कर्तव्य है ना ? सिर्फ पाप ही पाप होनेके कारण शुरूमें 'राम नाम' का सीधा उच्चार भी आसान नहीं था वालीको जो उन्नत प्रयत्नसे मुनिवर श्री वाल्मिकि हुअे । उनके प्रयत्न आदर्श मानकर, मुँहसे निकली बात, हाथसे लिखा हुआ शब्द और आगे बढा हुआ कदम खीचना या वांपिस लेना हराम मानना चाहिये ।

पुरुषोत्तम–पदकी प्राप्ती.

अपने दिलको खींचता है कोई आदमी जब वह आँखोंके सामने खडा रहता है पराई भाषामेंसे ठीक प्रतिबिंबित कविता जैसी बैसे विशेष दिखानेवालोंमे कोई महामना महात्मा हो, तो उसे अीश्वरका अवतार गिननेकी प्रथा है । तो बच्चा ऊठ । और जीके प्यारे, कर्तव्यभूमीपर पग ठहर दो पुरुषोत्तम जैसा । आगे बढ । जो कुछ तकदीरकी कृपा होगी, उसका सन्मान करनेकी तय्यारी रख । बेडर रहते रहते, हाथमें लियेहुअे कामकी सिद्धी अपनानेके लिये होशसे कोशीश कर । वही मारग है तेरे शिरपर अीश्वरके आशीस सम्पादन करनेका और खुद पुरुषोत्तम पदकी प्राप्ती करनेका ।

वीर बनो वीर !

विश्वासके निधान बनो । जो कुछ करना हो, उसका बनाव ऐसा उठा दो कि मरामतकी या फेर रचाओकी जरूरत न हो। माँके आनंदचंद्र, पिताजीके अभिमानरत्न, मदरसाके श्रेयशृंगार बन रहो। कुछ गलती होनेपर भी गफ्लतमें मत पडो। गलती क्या घबराहटका मामला है ? बडे बडे लोगोंसे गलती हो चुकी है और बडपनके आरोहणसे भी वह आदत जैसी की वैसी रही । जिनसे गलती नहीं होती, उनमे किसीका संभव दुरापास्त है। यद्यपि सोचना चाहिये कि गलती की महती अितनी होकर भी, गलती कभी कर्तबगारोंका ध्येय नहीं था, नहीं है । अपना अेकेक पग जहाँके वहाँ रखनेकी सचाई कार्यका अभिलाषी दिखाता है निजी आँखोकी दक्षतासे । तो तुम न्यायका काम करो और वह बे-डरसे । निजी व्यवहार, सत्यकी बहार, ज्ञानकी प्यास, न्यायका ध्यास, अमरताका व्यास आदिओंकी हँसीका नंदनवन अैसे फुलाओं कि तुम्हारी कर्तबगारीसे हिंदोस्तानका संदेसा आम संसारको मिल जाये, यदि आसमंतका महासागर हिंदुस्थानकी रक्षा अपने पेटमें करे। तुम्हारा दिमाग है नदीनदोंका जो विचारस्वातंत्र्यके पावन हिमालयसे बहते हैं। तुम्हारी मिट्टी है अलग अलग कटिबंधोंकी जिनसे चिरंजीव कर्तबगारी की नयी नयी समृद्धी हो रहती है। तुम्हारा प्राण है वह वायू जो कलाकलाओंकी मनोरमता संसारको दे चुका है। उन सबकी वैदिक कालसे चली हुअी कीरत तुम्हे सम्हालना चाहिये अपनी गुणशीलतासे और शूरतासे । युगके परिपाक, प्रवासिओंके

निरिक्षणसंग्रह और इतिहासकी चिकित्सा मान लें मानधनकी तरह तुम्हारी और तुम्हारी मायभूमीका नाम, वैसाही प्रवाह तुम्हारे जीवनका होना जरूर है।

नौजवान

नौजवान वह है जिसका खून गरम है। युवक उसे कहते है, जिसकी हड्डी मजबूद है। जवानीका अधिष्ठान मर्दानी मन है। जवानकी चालाखी चाहिये तीरकी जैसी। तरुणका मगज चाहिये सागरके माफक रत्नाकर। सिंहकी भाँति नौजवानकी नजर होना जरूर है इतिहासका क्रम उझालनेवाली। नौजवानके पगसे धरती विनयवती होना चाहिये। नौजमान आकाशके आकाश हाथ ले। आगामी कालका उठाव अेकमात्र ध्यान हो नौजवानका। बालबच्चेको प्यार करके उनकी परीक्षा बराबर नौजवान करे। बूढे लोगोंकी सलाहका सदा आदर रखे नौजवानके दक्ष कान। भूत के दिमाग की याद रखते रखते वर्तमानके सबक अपनानेका जमाना नौजवानही चलाता है। मृत्यूकी मौत कर ले, डरको पीछे छोड दे, कीरतका भगत बने, वीरोंकी परंपरा तेज चलाये, और नौजवान विस्मयसे हठाये अकलमन्दोको अपनी चमकदार कर्तबगारीसे। जिसका यही मगदूर है वही नौजवान चिरंजीव होता है विजयका धनी। भय्या, तूभी वैसाही विजयीभव चिरंजीव हो अपनी मायभूमीका नाम उज्वल रख। दूसरा कौनसा आशीश मेरे जैसा पामर तूझे दे सके अिस मौकेपर, जो दिखाता है कि यही सन्धि है मेरी रिहा होनेकी यहाँसे, जहाँ तेरा और मेरा मिलाफ थोडीही देरमें हुआ, मानों रेलके प्रवासमें जैसा।

आदमीकी जिम्मेदारी.

संसारकी शुरूसे ज्ञानभाण्डार आगे बढ रहा है हररोज। अिस ख्यालसे अपने बापदादे बालबच्चे थे तो अपने बालबच्चे बापदादे होंगे। वही क्रम है आधार जीवनके अक्षयताका। नहीं तो, चेलेकी सवाअीसे गुरुजीको या बेटेकी सवाअीसे पिताजीको आनंदकी पैदास कैसी हो सकती? वही जहाँ है, वहाँ है जीवनके शास्त्रका व्यवहार। बादमें स्पष्ट होता है मामला जीते जीकी मौतसी हालहवालका। आप, अपना कुल, अपना समाज, अपना राष्ट्र और संसार मर जाये, अैसा किसीका इरादा हो सकता है? नहीं, नहीं, नहीं। फेर हरअेक आदमीकी जिम्मेदारी पहचान कर लो अपने बालबच्चे हो या अपने पगपर पग रखनेवाले बीजे कोई हो, आदमीने ख्याल रखना चाहिये कि हरअेक कदमसे उनकी अपनेसे सवाई हो कीरत और कमाई। यही होता है मानवी धरमका पहला सबक। उसे जिसने हाथ लिया, आत्मसात किया और उसीमें प्रतिष्ठा मान ली, अेक उसीका जीवन आदमीका जीवन बन चुका।

निराशा.

निराशा! छेः। उसकी गरज है ही क्या? क्यों कि निराशा है जीती मौत। जीते मनकी दारुण दर्द है निराशा। और नीतीके अधःपतनकी पहली चिनगारी निराशाही है। परमेश्वरकी प्रेरणाका आविर्भाव "कला" नामसे बोल गई है। है न? तो अच्छा। उसी परमेश्वरी प्रेरणाको मिट्टीमें मिलानेकी किमया करनेवाला विषबिंदु है

निराशा । कलावन्तोकी मालामें अक ओर चित्रकार और दुसरी ओर शिल्पकार चमकते हैं । उन दोनोंके बीचमें समतोल रखकर कौस्तुभसा झलकता है कवि । इसलिये मन्चला होकर भी चित्रकारकी मोहनी और शिल्पकारकी जानकारीसे कवि अपनी शब्दसृष्टी सजाता है । उस कविका कहा है कि—

" है क्या, बोलो, सची निराशा ?
डरपोकीका जगमें प्यासा ॥
मूरख उससे होता पीसा ॥

अैसे पंडितब्रुवोंकी पंक्ति शृंगारना किसी अपनेको आदमी कहलानेवालोंको पसंद आयेगा ? मेरी रायसे तो नहीं । और जब मै बराबर हूँ, तब कोअीभी आदमी मिलनेके वख्तही कहेगा कि—
" बहन निराशा, लौटो वापिसही ।"

वैसाही पुरुषोत्तम हो ।

सिरपर खेलकूद रहनेवाले नये नये बाल भुलानेवाले है प्रपंचकी चंचालतसे पीडित मनको । आस–पासमे मजाक मारनेवालोंको दिलसाफ विश्वास रखनेकी मोहनी डालनेवाली मस्तिष्ककी भव्यता और भौंकी मेहरपी परिस्थितीका कब्जा करनेवाली । सुअीकी नोकसी भूमी ठीक ठीक समझमें लेनेवाली सूक्ष्म नजर । कानोंकी सावधानी कीडे-मकोडीकी कुज बुज अपनानेवाली । कुल मुँहका दिमाग फूलोंको चांदनी होनेके लिये हरशानेवाला । नाक–का साँस लोगोंका प्रलोभन । ओंठपें झलकनेवाली हँसी लोगोंकी प्रफुलता । जबानसे

निकला हुवा बोल लोगोंकी गलेका हार। विशाल सीनेका, भरदार बाजुओंका, गोल कलाओंका, मजबूद आँखका, ठीकठास कदमका और कुल अक्यवोंकी आखिली–रोखिली हलचलसे बना हुआ स्पर्धा-स्थान देवोंका–अैसाही पुरुषोत्तम जब अपनी कर्तबगारीके शेषपर आराम कर कर रहता है, तभी निसर्गलक्ष्मी उसके चरणोंकी दासी बन चुकती है। हो, बच्चा, वैसाही पुरुषोत्तम हो।

विष्णुशास्त्री.

ब्रिटिश रियासतमें फुली हुअी मराठीका श्री छत्रपती शिवाजी थे विष्णुशास्त्री चिपलूनकर जिनका दर्पन अपने सामने नौजवानोंने रखना चाहिये स्वावलंवन, स्वाभिमान और स्वातंत्र्यवृत्तिकेलिये। घरेलू हो, गांवकी हो या लौकिक हो, अपने जीवनकी छोटी छोटी बातों में भी अपनी मदरसाकी अिज्जत कम न होगी, उसका गौरव बढेगा, नहीं नहीं, अपनेहीमें मदरसा गर्व रखेगी, अैसा बर्ताव कर-नेकी कोशिश महाराष्ट्रके विद्यार्थीओने करना, अपनी मराठी भाषाका उत्कर्ष, जी ही लगाकर अनेक कर्तव्यका परिपालन और लोंगोके नमस्कारोंका विशुद्ध स्थान होनेवाली जीवनिका अिस मनोहारी मगर कठिन संसारमे रखना अेकमात्र पूजा है विष्णुशास्त्री चिपलूनकरजीकी।

कुल या कुटुम्ब.

कुल, अेकत्र-कुटुंबपद्धति या श्रेष्टयत्त कुटुंबव्यवस्था जिसके नामाभिधान है उसमें हरअेक स्त्री या पुरुष की कर्तबगारीका अेक मिलाफ होना चाहिये। पर रूढीसे, महत्वाकांक्षाकी अमर्यादासे

अथवा परावलंबनके तिरस्कारसे जब कुलका नेता नादान घटकोंका अेक व्यावहारिक ऋणायीत बन चुका, या कर्तबगार घटकोंकी शिकायत करनेवाला मुफ्त मोंगल बनना चाहा, संतति यानी दिमाग चढाने-बढानेवाली प्रजाकी परंपरा लोप पाने लगी। फलमें बिब्बी मिय्याके अलग मकान और चूलेकी आदत आयी। व्यक्तीस्वातंत्र्यका बडेजाव इस आदतमें इतना हुआ कि आर्थिक लापरवाहीकी तंगी सहनी पडी। सामुदायिक सहवास या कुलकी संघटित जोपासना जहाँ मंजूर नहीं है, वहाँ आर्थिक तंगी और उसके अनुषंगिक परिणामोंसे प्रजा-प्रतिबंध (बर्थकट्रोल) की प्रवृत्ति जारी हुअी। लेकिन संतति यानी बापदादोंकी दिमाकदार परंपरा चलानेवाली प्रजाकी आकांक्षा यहाँ भी छोड नहीं दी गई। तो अनुभवोंका परिपाक यह हुआ कि कुल और बिब्बीमिय्या—परंपराओंके विशेष लेकर सहकारी कुटुंबपद्धति बना जाये, जहाँ व्यक्तिस्वातंत्र्यका परिपोष यथास्थित हो और सहकारी जीवनका अनुभव भी यथोचित मिल जाय। सहकारी कुटुम्बके लिए अेक वंश, अेक जाति या अेक वर्णके कुलोकी जरूरत नहीं। खास दिलसे दिल मिलानेवाले आदमीओंकी आवश्यकता होती है।

महाराष्ट्रके सुपूत!

सतरहवी सदीका मध्य छत्रपति शिवाजी महारजकी लडाइओंसे दिमागदार है, जिन्होंसे हिंदवी स्वराजका बीज बो गया। अठराहवी सदीके शुरूमें अन्त हुआ तीस बरसोंके जंगका जिसमें मराठी महत्त्वाकांक्षओंका वृक्ष बेहद पल्लवित हुआ और फूलफलोंकी

आकांक्षा करने लगा। उसी सदीकी अेकसष्टी पानिपतके घोर जंगेस मुद्रित है, जिसने अटक पार करनेवाले मराठाओंके झँडेकी नामो-निशानी भी छीन ली। उन्नीसवीं सदीकी पहली उम्मीदकी उम्र बापू गोखले जैसे जवानमर्दोंकी हड्डी--लहू छूट जातेही स्वराज्यवृक्षका कोयला देख रही। आयि महाराष्ट्रके सुपूत, जंगकी ताकद तुम्हारी होतेही तुम्हारे स्वराज्यका अस्त हुआ। अभी उसका उदय निर्भर है, तुम्हारीही कर्तबगारीपर जिसकी मुद्रा कालचक्रकी गतिपर तुम कर सके। नहीं नहीं उसकी शाश्वती तबतक है जबतक तुम्हारा मगज पगपगपर सोच रहेगा अेक मात्र स्वदेशका हित। क्यों, तुम इस कसोटीपर न उतरें?

श्री तुकारामकी कविता.

आडंबरकी बिबकुल कमी, हरदम स्वभावसेही उठाव देने-वाली, वेदान्तके पण्डित हो या कोई अनपढा हो, कोई भोला-भाला हो या कोई चिकित्सकोंका शिरोमणि हो, उन्ही सबका आदरस्थान हो चुकी अैसी मराठी भाषाका रत्नमाला सिर्फ तुकारामकी 'अभंगवाणी' है।

हरअेक हरिदास अपने कीर्तनकी शूरूमें तुकारामका कहा सुनाता है। विल्सन के माफक अंग्रेज, अॅबटकी योग्यताका अमरिकन, न्यायमूर्ति रानडे जैसे स्थितधी अितिहासका, डॉ. भांडारकर के माफक गाढे पण्डत, प्राचार्य वासुदेव बलवन्त पटवर्धन जैसे अज्ञेयवादी और प्राध्यापक रामभाऊ रानडे जैसे वेदान्तमार्तण्ड फिदे हुवा करते है या थे। सब संसारको आर्य बनानेकी आज्ञा वेदोनें दी है जो

थिऑसफीके भगत आजकल सब धरमोंकी समानता देखकर अमलमें लाना चाहते हैं। वोह थिऑसफी भी अब तुकारामकी कविता पढना पढना प्यार करते है। यह सब देखकर, मगज सोचने लगता है कि यदि तुकारामकी 'अभंगवाणी' अंग्रेज या फ्रान्सी भाषामें संसारको प्राप्त होगी, तो पंढरपूरमें चंद्रभागाजीके तीरपर हरअेक देशके विचारवन्त यात्री बनेंगे और तुकारामकी आराध्य--देवताका घोष--'विठ्ठल जय हरि विठ्ठल' आनन्दसे करेंगे।

महाराष्ट्रका अितिहास

देसके पूत "तानाजी" ही होते हैं। याने शुरूमें बालबच्चे होते हैं। ऊन्हे "समर्थ" याने प्रभावी होना चाहिये। उनके हाथसे कर्तबगारीकी आकांक्षा रहती है। कर्तबगारीकी जडें है आत्मविश्वास और साधनाकी तरतूद उनके सहाय्यसे दिन प्रतिदिन जीवनीको तेज चलाना है इतिहासका मर्मस्थान। महाराष्ट्रके इतिहासका यही सार है। ताकद व युगत का मिलाफ है खजाना यहामष्ट्रके इतिहासका जो अव्वलमे बनाया है शिवाजी, बाजीराव और नाना फडनवीसने जैसा मूगलोंका बाबर, अकबर और औरंगजेबने।

नामदार खोंखले.

नामदार गोपाल कृष्ण गोखलेजीकी याद आतेही अभ्यासक अंतःकरण का कहा है कि "पर दुःखेन दुःखिता विरला"

दरद देखते दिल दुख पावे,

जगमें जन वे कितने है? कष्टोंसे अपनाअी हुअी विद्वत्ताकी

साधना स्वार्थ या सुखका निर्माण आसान करनेवाली होकरभी उसकी योजना, प्रगमनशील राष्ट्रोंके तिरकारस्थान बनी हुअी मातृभूमीकी सेवामें गोखलेजीने की। हिंद का सनदी नौकर होनेका मौका ठुकरा देकर भारतकी सेवाका व्रत लेनेमें गोखलेजीका अभिमान था। नहीं नहीं खुद अेक यंत्री होनेके जगह भारतसेवक-समाजकी स्थापनासें गोखलेजीने भारतकी उन्नतीका निर्माण करनेवाले यंत्री और मंत्री तपोबलसे चमकदार करनेकी व्यवस्था की। भारतकी परतंत्र अवस्थामेंभी अपनी कुशल राजनीतिसे गोखलेजी भारतके—मानो ग्लॅडस्टन हुअे। संसारको ज्ञात हुअे अविचल बुध, सभ्य आदतें, स्वयंनिर्णयी दिमाग और उत्कट देशप्रेम है गोखलेजीके विशेष जिनका अनुकरण नवजवानोंका भूषण होगा। उन्नीसवे बरसकी उम्रसे गोखलेजीनें देशसेवा शुरू की और मुँहसे निकले हुअे बातोंको इतनी इज्जत रक्खी कि लॉर्ड कर्झन जैसे सुलतानको भी गोखलेजीके दिलकी शुद्धी अेकमात्र आदरस्थान था।

विनय.

विनय है फल विद्याका, जो मदरसामें या यहाँवहाँ मिले। विद्याकी सिद्धि सरकार, शिक्षक, पालक और विद्यार्थिओंसे होती है। हरएक आदमीको एक ना एक दिन चारो तरहोंकी जिम्मेदारी लेनी पडती है। प्राचीन कालमें गुरुकुलोंकी भूमीपर किसी तरहका कर नहीं लिया करता था राजा। आजकलभी प्राथमिकसे फौजी तक शिक्षा मुफ्त देनेका कर्तव्य राजनीति मानती है। कालिदासका कहा है कि राजाका पहला कर्तव्य "प्रजानां विनयाधान" यानी विद्या-

दान है। शिक्षकोंकी जिम्मेदारी राजासे भी जादा है। उन्हे विद्वत्ता चाहिये, सीखानेकी चालाखी जरूरत है और उमकी नजर मदरसाको गृहशिक्षाकी पुरवणी बनानेमें अवश्य है। तो गृहशिक्षाकी महती कितनी है यह स्पष्ट होगा। "पितृमान" यानी पिताका नाम अपने चरितसे सन्माननीय करनेवाला बच्चा हो, ऐसी ईर्षा गृहशिक्षाका मूल है। विद्यार्थिओंकी आँखे सुखकी ओर ना चली जावें। अभ्यास और स्वाध्याय उनका ध्यास बने तो उनके अभिजात गुण प्रगट होनेका रास्ता खुल जायेगा? अभिजात गुणोंका आनिबंध आविष्कारही है विनय।

महाराष्ट्र-भाषा का वेद

"है शरीर पावन क्षेत्र सही। जिसमे 'आत्मा' देवि रही" तुकारामका यह विश्वास था। अिसीलिये उसको बात न थी फेर जनम पाने था न पानेकी। अिसी बेपरवाहसे अपनी भक्तीका निर्व्याज हिसाब देनेका धीरज हो सकता है। मगर प्रवृत्ति क्या चाहिये, मालुम है!

"नम्र हुआ है" "जीव जीवसे
अनन्त उसने रोका है।"

यही प्रवृत्तिका जमाना नड जमा कर रहाना समुचित है।

"विष्णुदास हम् हुआ करत हैं
मख्खनसे भी मऊ मऊ।
कठिन वज्रको खास छीन दूं॥

ऐसा जिनका आत्मविश्वास है और जिनका दिल आकाशके माफक विशाल होकर जिनके पास ऊंचा-नीचा, सुख-दुख, अपना—पराया ऐसा कोई भेदभाव ठहरता भी नहीं, उनकी योग्यता अपनानेका अभ्यासक्रम कहाँ भी मुकर नहीं है। यद्यापि तुकारामने किसी वेदपाठ शालाका आसरा ना लेकर ही वह प्रतिष्ठा अपनायी थी क्योंकि तुकारामकी कविता "रसात्मक काव्य" है ही। बल्कि कविताकी अेक व्याख्या है न "हृदयरसोंका उन्माद बढानेवाली है कविता"! उसी कसौटीका प्रत्यय तुकारामकी कविता देती है। "उत्कट भावनाओंका तात्कालिक आविष्कार" है कविराज वर्डसवर्तकी उक्ति। तुकारामकी कवितासे वह सार्थसी भाती है। इस सीधेपनके वैभवसे तुकारामकी कविता मानी जाती है महाराष्ट्र—भाषाका अेक वेद।

ईसाई—के प्रयत्न.

संसारमें शान्तिब्रह्मके साम्राज्यका फैलावा हो, इसलिये जिस ईसाने फाँसीपर मौत भी स्वीकारली, उसके अनुयायी और भगत संसारका भस्म करनेवाले जंगगी तय्यारियाँ तो कर रहे हैं या तो हिन्दोस्तान जैसे जित राष्ट्र" जीते हुएभी मर्तिकके समान" पुरुषोंमे कैसा भर रहे जाये इस चिंतामें पड रहे हैं। महाभारतका आदेश है कि

"ना हैं मारे दुष्मन जो जो मार गये हैं शस्त्रोंस।
मार गये हैं दुष्मन निश्चित जिनकी बुध है ली सिरसे॥"

हिंदुस्थान उसका अनुभव करता है हरदम। मेकॉले साहबकी शिक्षा-प्रणालीसे यह प्रज्ञा मारनेका मामला चल रहा है। एक सदीके इस दरदपर एकही दवाई लोकमान्य तिलकजीनें दिरवाई थी लोगोंके

स्वराज्यकी जो लोगोंके कल्याणके वास्ते लोगोंने चुने हुए प्रतिनिधिओंसे चलाया जाता है ।

कहते है कि ईसाई धरम त्यागपर खडा है । पर कौनसा धरम त्यागका महिमा गाता नहीं ? वैदिक या आर्य धरमका अेक आश्रम है संन्यास जो सिर्फ त्याग के त्याग है । लेकिन उसको तैय्यारियाँ जीवनकी शुरूसे करनी पडती है । विना–ऋण मौत मानवी जीवनकी कसौटी हिंदु या आर्य धरम रखता है । ऋग्वेदकी ऋचाअें

" परऋणा, साविं अथ मत्कृतानि
नाहं राजन् अन्यकृतेन भोज्यम् । "

आदि संन्यास यानि संसारके कल्याणके वास्ते लोगोंकी सेवामें अपनी सब चीजोंका त्याग सिखानेवाली पाठशालाअें है । लेकिन त्याग लाचार न होना परंतु यज्ञमय होना चाहिये, अैसा है दंडक आर्य धरमका । उसे ठीक ध्येयकी भी जरूरत है । कुटुम्ब या कुलके लिए अेकका, गाँवके लिये अेक कुटुम्बका, समाज या राष्ट्रके लिए अेक गाँवका–संघटनाकी तेजस्वी जीवनके वास्ते घटक–का निशान नहीं मानता हैं हिंदु धरम । मगर त्यागके ढोल बजानेवाले ईसाई धरमको माननेवाले राष्ट्र या राष्ट्रसमूह पाश्चवी जगोंसे संसारका संहार कितनेतक कर रहे हैं इतिहासका अेक काला पत्ता है आजकल । हिंदोस्तानमें या दक्षिणी आफ्रिकामें तथा अमेरिकामें भी प्रभु ईसाके अनुयायीओंकी जो राजनीति चल आयी है उसमें परोपकार और लोककल्यानका डिंडिम बजाते बजाते दुसरे को गुलाम बनानेकी विषप्रवृत्ती छुपी रहती है ।

संतति.

बालबच्चोंसे होनेवाले कूजनमें मकानका संगीत चलता रहे सदाके लिए। कौनसा नौजवान या उसकी पत्नी इस सोचकी नहीं! बैबलके पुराणे करारमें हरएक आदमी कमसे कम एकबीस बच्चोंकी वांच्छा रखनेवाला देख पडता है। ग्रीक और रोमन लोग बालबच्चोंको मधुमाक्षिकाएं मानते थे। चीन या जापानमेंभी यह आकांक्षा अमृतकी आकांक्षा जैसी मान ली जाती है। १७ वी सदीके युरोपमे सामाजिक जीवनकी प्राणज्योत यही कल्पना थी। हिंदुस्तानके आर्योनें हरएक तरूण स्त्रीको आशीस देनेकी प्रथा ठीक रखी है "अष्टपुत्रा सौभाग्यवती भव।" प्राचीन कालमें तो क्या? उसका गौरव हुआ करता था। "प्रजापति" उपाधिसे जो सौ पुत्रोंका पिता होकर उनकी शिक्षा पूरी करता था और उनके प्रपंच या गृहस्थीकी शुरू ठाठमाठसे कर देता था।

व्यवहारी पूर्णांक अपूर्णांक.

ध्यान रखना चाहिये कि शिक्षक सदाके लिये "व्यवहारी अपूर्णांकही" सीखाते हैं। शिक्षकोंने तैय्यार किये हुअे अपूर्णांकोंसे पूर्णांक विकसित होनेकी आकांक्षा समाजके विचारवन्त रखते हैं।

विनयका मूलमंत्र.

सिवा विनयके नागरीकत्वकी बात झुटी है। मगर राष्ट्रीयता है नागरीकत्वकी पार्श्वभूमी। और राष्ट्रीय शिक्षा ही अन्वतमें विनयकी जननी है।

पराक्रम क्या है ?

ऐहिक वैभव और अध्यात्मिक उन्नति मानवी जीवनकी आवश्यकताऐं हैं । वैदिक धरमका बच्चा इसलिये उसे धरम मानता है जो दोनोका संपादन कर सकता है । स्वराज्य है अभ्युदयका उत्तमांग । उसकी जरूरत है पराक्रम । बापदादोंका गुणगान पराक्रम नहीं । बापदादोंका अभिमान, उनकी तेज परंपरा चलानेमें या सवाई बढानेमें प्रगट हो, तो पराक्रम हो सकता है । इतिहासका लोकहितकारी निर्माण पराक्रम है । पराक्रमका आधार अभय है जो गीताकी रायसे दैवी संपतका पहला और मंगल गुण है. । इसी अभयसे कालसागरके किसी भी आघातसे वैदिक धरमका बच्चा विचलित नहीं होता । उसे डर नहीं समाज-सत्तावादकी भी जो परमेश्वरकी मौत बजा रहा है और जिसकी घोषणा है कि भोंके पसीनेसे भी जब पेटकी चिन्ता नहीं मिट जाती या परिश्रमका मुशाहिरा जब ठीक ठीक नहीं मिलता तब उसी पद्धतिकी रक्षा करनेवाली समाज–व्यवस्था या राज्यव्यवस्था अेकदम खतम होना चाहिये ।

सेनापती बापू गोखला.

कहाँ गये मालुम नहीं हुअे [सदाशिवराय] भाऊ पेशवाजी पानिपतके घोर जंगमे । स्वराज्य की सेवामें वैसेही लगे सेनापति गोखलखाँ बापू गोपाल–अष्टीके रणांगणमें । भाऊकी धर्मपत्नी पार्वतीदेवी सौभाग्यवतीसी चली विश्वाससे कि पतीजीका अन्त पानपतमें नहीं हुआ । पर खून–लहुसे भरा हुआ बापूका घोडा

देखकर भी उनकी पत्नी जमुनादेवी सौभाग्यवतीसी चली १८४२तक, जब बिठूरमें उसकी मौत हुअी। जमुनादेवीका इतमाम जैसा कि वैसा रखनेका इकरार कुंपणी सरकारके साथ बाजीरावसाहबने किया था, स्वराज्यका कारोबार कुंपणी सरकारके हाथ देते समय। वह इकरार चल रहा इमानसे। वह दिखाता है बापूकी राजनिष्ठा और बहादरी कितनी परिणामी थी उनके मालिकपर तथा शत्रूओंपर। कुंपणी सरकारसे बाजीरायका जब अन्तीम सामना खडा हुआ, लिंगो भगवान बकीलके मार्फत बापूके ऊपर फितुरी का हमला चढाया गया, पर गोखलखाँने जबाब दिया कि स्वामीकी सेवामें मैं मर जाऊं पर फितुरीका कलंक मुझे न हो। अंग्रेजी कुटिल नीति गिर पडी। पर वह निरुत्साह नहीं थी। उसने निपाणीकर सरलष्करको बशमे लिया। उनके मिठास भाषणसे बाजीराव गोखलखाँकी अकही न सुनते भोजन बैठे, जब मौकेपर हुअे अंग्रेजोंका छापा आया। बाजीरावकी घबराहट गोखलखाँकी निर्भत्सनामें परिणत हुअी। तो बापू ने स्वामीजीके चरणपें प्रतिज्ञा पेश की कि "या तो मै लढाईमे फत्ते होकर स्वामीके चरणपर सिर नमाऊं या सेवा करते करते मौत की भेट लूँ"।

डॉ. भडकमकरजीकी महता कहाँ है।

डॉ. भडकमकरजी अैसा एक आदर्श पुरुष है जो हर वख्त राष्ट्रकी सेवा चाहता है और पग-पग पर युवकोंको मारग दिखाता है। अपने सत्वशील दादाजीकी शिक्षा आपने अपनायी है, अपने दिलदार पिताजीकी दीक्षा आप कभी भूल नहीं सकते और अपने

गुरुजी—प्राध्यापकोंसे ली हुई ज्ञानकी भिक्षा आपने आत्मसात् करके ऐसा स्वभाव बनाया है जो निजकी हरएक चीज लोकसेवाकी साधना मानता है। खुले कानों और खुली आखोंसे संसारमें अपने देशबान्धवकी जरूरत जाँच—सोचकर डॉक्टर भडकमकरजीने अपना ज्ञान, अपनी संपत्ति, अपना समय सब कुछ मुक्तद्वार रख्खा है।

डॉक्टर महाशयका व्यवसाय ही तत्त्वतः परोकापर है। मगर परोपकारी व्यवसायको भी बेपारकी दूकान बनानेकी कोशीस जहाँ वहाँ देखी जाती है। डॉक्टर भडकमकरजी अपने पिताजी विल्सन कॉलेजके प्राध्यापक हरिभाऊ भडकमकरसे सुसंस्कृत हुअे थे और लोकमान्य तिलकजीकी स्वराज्य—चतुःसूत्रीसे उत्स्फूर्त थे। परिणाम यह हुआ कि भडकमकरजी कंगालोंका-गरीबोंका-हीनदीनोंका अेकमेव धन्वंतरी है जो उनकी सेवा तत्परतासे अपनी अव्वल जीवनी समझता है जैसा प्रभु पंढरीनाथ अपने भक्तोंकी। कोई भी रुग्ण डॉक्टर भडकमकरजीके पास आवे, उसकी परीक्षा—रोगचिकित्सा डॉक्टरसाब इतनी आत्मीयतासे करेंगे कि न जाने वह रुग्ण उनका भाई या बहन हो। डॉक्टरसाबकी सुरुचिरा हँसी और मधुरा वाणी, तथा धीरे धीरे रुग्णका इतिहास सुननेकी शान्ति अजब है जो रोगके साथ साथ रुग्णका मानसिक, आर्थिक और सामाजिक परिचय भी आसानीसे लेती है। इससे डॉक्टरसाब रुग्णोंका दैवत बन चुके हैं। रुग्ण मानते हैं कि यदि व्याधिसे मरना है तो भडकमकरजीकी चिकित्साके बाद मरें। समाधान इतनाही है कि मानवी पराकाष्टाकी सीमा हो चुकी जिसके पार कोई जा नहीं सकते। क्यों कि डॉक्टर भडकमकरजीकी चिकित्सा जैसी अद्वितीय है वैसीही उनकी उपाय-

योजना भी। बल्कि, रुग्ण जहाँ असहाय्य हो, खुद डॉक्टरसाब अपने जेबसे दाम देकर उपाययोजना बराबर करेंगे। इस विश्वाससे आपके दवाखानेमें हर रोज इतनी भीड होती है जितनी जगन्नाथकी रथयात्रामें। यह दिमाग चल रहा है गये हुअे तीस बरसोंका अव्याहत। संध्या हो या सबेरा, रुग्णोंकी सेवा अेकमात्र मारग मानते हैं डॉक्टरसाहब ईश्वरकी सेवाका जिसमें आप अपना खानापीना भी भूल जाते हैं। ऐषआरामकी बात तो क्या?

डॉक्टरसाहबके रुग्णोंमें संस्थानिक हैं, सरदार-दरकदार हैं. जहागीरदार-इनामदार हैं जैसे रास्तेके बेचारेभी हैं। मगर किसीको भी डॉक्टरसाहबने दामके लिये रोका नहीं। कहते हैं कि लक्ष्मी चंचल है, जो कोई उसका ध्यास लेता है उसको यह दास बनाती है, जो कोई उससे बेफिक्र है उसकी वह दासी बन जाती है। डॉक्टर भडकमकरकी जीवनीका अनुभव वैसाही है। लक्ष्मी आपकी दासी है और बैठते बैठते आपके जेबमें पेसा काफी आता है। मगर डॉक्टरसाहबने उसका उपयोग लोकसेवामें अलोट किया है। पाश्चात्य वैद्यक-पांडित्यको आत्मसात् करते करते डॉक्टरसाहबको प्रतीत हो चुका कि उस शास्त्रका संशोधन अव्यहात चल रहा हैं। नयीं नयीं पद्धतियाँ और साधनाएं भी प्रकाशमें आती हैं। पर, मूलभूत सिद्धान्तोंकी निश्चिति हरएक पंधरह बरसोंमें बदल जाती है। ऊपरकी तो बहोत बनी, अंदरकी बात ढिलाईसे संलग्न है। दूसरा भी एक प्रकाश डॉक्टर महाशयको आया कि पश्चिमी औषधियाँ हिन्दोस्तानकी हवासे, रहन-सहनसे, आर्थिक हलाखीसे जैसी कि वैसी मिलती

जुलती नहीं है। तो व्यवसायको भी धरम माननेवाले डॉक्टरसाहबने यहाँके मूल वैद्यकका याने आयुर्वेदका अभ्यास अपनाया। अभ्याससे डॉक्टरमहाशय समझ चुके कि आयुर्वेदके मूल सिद्धान्त अढळ हैं। अभाग है कि उसकी संशोधन-परंपरा संसारके जीवनकलहमें खंडित हुई और तारीखतागायत तेज नहीं रही। पारतंत्र्यका यह घोर परिणाम देखकर डॉक्टरसाहब व्यथित हो चुके। और आयुर्वेदीय तथा युनानी वैद्यक पद्धतियोंका दिमाग बढानेकी और उनको प्रतिष्ठा सरकारदरबारमें जैसी मान्यता संसारके चिकित्सकोंमें मंजूर कर लेनेकी महत्त्वाकांक्षा डॉक्टरसाहबके मगजमें उदित हुई। फल यह हुआ कि आर्यांग्ल वैद्यकोंका तुलनात्मक अभ्यास पढानेवाली संस्थाएं, रसशाला-अर्कशाला आदि तैयार दवाई बनानेवाली कारखानदारी और औषधि-संशोधनमंदिरें डॉक्टर भडकमकरजीकी सलाहका, आर्थिक मददका और खुदकी उत्तेजनका कृपापात्र बन चुकीं। काँग्रेसी प्रधानगिरीके समय जब देसके कारोबारमें स्वल्पमात्र आत्मीयता निर्माण हुई, स्वदेशी वैद्यकका अरुण फाँकने लगनेका मौका आया। डॉ. गिल्डरकी सहानुभूतीका फायदा उठाया गया। एक कानून स्वदेशी वैद्यहकीमोंको सरकारदरबारमें मान्यता देनेवाला मंजूर हुआ। प्रमाणके लिये जो अभ्यासक्रमादि साधनाएँ लगती हैं और विद्यालय जैसी कोशीशेंभी जरूर हैं, उनके लिये एक बोर्ड निर्माण हुआ जिसके नेताजी डॉक्टर भडकमकर चुने गये। उस स्थानसे डॉक्टरसाहबने देशी वैद्यककी ऐसी सेवा की है कि जो लोगोंकी पसंदी ले चुकी है और सरकारकी भी। 'नृपतिजनपदानां दुर्लभः कार्यकर्ता' डॉक्टर भडकमकरजी है जैसे नामदार गोपाल कृष्ण गोखले थे।

डॉक्टर भडकमकरजी लोकमान्य तिलकजीके सच्चे अनुयायी हैं। उस राष्ट्रपुरुषनें डॉक्टरसाहबमें प्रदीप्त की हुई राष्ट्रसेवाकी भावना नंदादीपकी तरह डॉक्टरसाहबके हृदयमें तेज रही है। तो डॉक्टरसाहब मानते हैं कि राजकीय उन्नतिके बराबर सामाजिक उन्नति भी होना चाहिये। इसके लिये आप पुराणी संस्कृतिके और परम्पराके अभिमानी होकर भी अन्धे नहीं है। चिकित्सक हैं आप हर दिन ज्ञानेश्वरी पढते हैं। भजन भी गाते है। मगर आपका अंतरर्ज्ञान अतुल है आपकी यकीन है कि राष्ट्र मगजसे, विवेकसे मजबूद होना-रहना आवश्यक है। तो जब महात्मा गांधीजीके आध्यात्मिक राजकारणका असहकारयुग शुरु हुआ और राष्ट्रीय शिक्षाका आन्दोलन ऊठ रहा, डॉक्टर भडकमकरजीनें अपने साथियोंके साथ बम्बईके नेशनल मेडिकल कॉलेजकी स्थापना की। उसकी उन्नति और स्वास्थ्य बढानेके लिये अपने द्रव्यका यज्ञ किया व कुछ कालतक छात्रप्रिय यशस्वी प्राध्यापक भी हुए। मगर संतुष्ट नहीं थे। लोकशिक्षाकी यह मर्यादा आप अधुरी मानते थे और है। इससे राष्ट्रीय शिक्षाका दूसरा भाग जो संसारमें आजकल अखबार मान जाता है, उसके लिये भी समय और द्रव्यका यज्ञ किया। देशभक्त काकासाहब खाडीलकर जैसे कुशल संपादकके हाथमें "लोकमान्य" नामक एक दैनिक प्रास्थापित किया जिसकी उज्वल परंपरा आजकलके दैनिकोंने महाराष्ट्रमें राष्ट्रीयताकी आघाडी संभालनेमें रक्खी है। जब सेनापती बापटजीके नेतृत्वमें "मुलशी" का आन्दोलन जारी था, उसके संचालनके लिये डॉक्टरसाहबका

मकान " श्रमशाला " बन चुका था और उस आन्दोलनका प्रकाशपत्र " सत्याग्रही " डॉक्टरसाहबके यहाँ अपना हरएक हफ्तेका अंक लोगोंके हाथमें दे रहा था ।

राष्ट्रके युवकोंका मगज जैसा तेज रहना चाहिये वैसही शरीरयष्टी । चाहे स्त्री हो या मरद, उसका शरीर तगडा होना-रहना आवश्यक है । डॉक्टरसाहबने उसलिये व्यायाम-शिक्षाकी मदद और उत्तेजना की है । तथापि, अनाजका प्रश्न—रोटीका सवाल सबसे तुरन्त छूटना जरूर है । पेटकी लाचारी राष्ट्रके युवकोंको नादान बनाती है । उस लाचारीको ठुकरानेके लिये किसानोंकी खेती, खेडूतोंकी कारागिरी और यंत्रप्रधान औद्योगिक उन्नति भी डॉक्टर-साहबकी आँखोंमें ध्येयरूप बन चुकी है । फलटनमें डॉक्टरसाहबने किये हुए खेतीके प्रयोग, फलटनकी शुगर—फैक्टरी, पूनेकी गूड—कंपनी, केनरा पल्प अँड पेपर मिल, राजमहेन्द्रीकी आन्ध्रा पेपर मिल, बम्बईकी सिंथेटिक्स आदि उद्योगक्षेत्रमें महाराष्ट्रका नाम और कर्तबगारीका झँडा ऊंचा रखनेवाले व्यापोंका आधारस्तंभ है डॉक्टर भडकमकरजी जिनकी कृपासे बहुतेरे युवकोंका जीवनप्रश्न सुलझ हुआ है और प्रतिष्ठा बढ चुकी है ।

डॉक्टरसाहबकी जीवनीकी इस आलोचनासे कोई भूल न जावे कि संगीतादि कलासे डॉक्टरसाहब दूर हैं । उद्योगरतोंका मनोरंजन भी एक राष्ट्रीय पुष्टी है । डॉक्टरसाहबने संगीतकी उत्तेजना इतनी की है कि गन्धर्व नाटक मंडलीको अपनी बच्ची आपने मानी

है और श्री. आल्तेकरजीके भजनसे या मास्टर कृष्णरायके गायनसे आप पीसे बनते हैं।

मगर उन सब आन्दोलनों, उत्थापनों, उत्तेजनाओंमें डॉक्टर दादासाहब भडकमकरजीका व्यक्तिमत्व नहीं है। आपका व्यक्तिमत्व। इन सबसे अलग और उँचा है। नहीं नहीं, उन सब आन्दोलनोंका, उत्थापनोंका, उत्तेजनाओंका आप दृढभाजक हैं। दादासाहब अपना कर्तव्य फौरन मुक्रर कर सकते है। एक कर्तव्यकी पूरी करते करते आपको दूसरा कर्तव्यक्षेत्र प्रतीत होता है और आपका उत्साह, प्रतिपच्चंद्रलेखा जैसी, बढता है। विवेकसे यत्नकी जोड देकर डॉक्टरसाहब अखंड कर्मयोगकी साधना करते हैं जो अव्वल जीन्दगी है। इस जीन्दगीका प्राणवायु है दया जो सन्तोंकी पूंजी और धरमका मूल है। भूतमात्रका पालन और दुष्टोंका निर्दालन दयामें अंतर्भूत हैं। और उस दया हाथमें लेकर जब आदमी अपनी कर्तबगारी समाजकी सेवामें व्यतीत करता है और प्रजाओं याने चमकदार और तेजस्वी स्त्रीपुरुषोंका दिमाग वन्दनीय रखता है, अपनी सरलतासे सन्त हो जाता है। डॉक्टरसहबने अपनी जीवनीका यह सन्देश दिया है सोलाह बरसोंके युवकके उत्साही कर्मयोगसे अपनी एकसठ बरसोंकी उम्रमें भी। इससे डॉक्टरसाहब महाराष्ट्रके आदर्श और सन्त धन्वन्तरी है जिनके चरणोंपर कृतज्ञताकी अंजलीही एक पूजा है।

पाठशालाकी प्रतिज्ञाएं

"भाअीचार जैसा दानकाभी मामला होना चाहिये।" अेक सरकारी नोकर होकार भी मेरा मित्र अितनी सामाजिक निगाह रखता है। अिन्कमटैक्स-प्राप्तिकर—लेनेमें जो तत्व लोगोंकी सरकार

रखती है, उसे अमलमें लाना हरअेक आदमीका कर्तव्य है। अैसी रायसे मेरे मित्रने प्राप्तिके हरअेक रुपयेमेसे अेक-अेक आना सार्वजनिक सामाजिक कार्यको दे दिया। बीस बरसोंमें पाँच हजार रुपये समाजसेवामें निरपेक्ष भावसे अर्पित किये। विना प्रसिद्धीके। आज मुझे हिसाब देकर खतसे पूछता है " बीस बरस पहले कृष्णा-किनारे बैठकर गपसप करते करते कमसे कम जो देशसेवाका मार्ग मुकर किया था पाठशालाके सब साथियोंने, मैना अैसाव अितना आक्रमण किया है। आपका अहवाल दीजिये " क्या दूँ ! अनमोल और फेर हाथमें न लगनेवाले कालका हिसाब नहीं, पैसोका कहाँ? और पाठशालाकी प्रतिज्ञाअें क्या व्यवहारके लिये हैं ! हैं ।। जी हाँ! तिलक महाराजके देशवालोंकी यह जिम्मेदारी है। मगर अबतक मैं समस्था पूरी नहीं कर सकता। लाचार हूँ।

रामकहानी मत कहो !

यह संसार दुखसे भरा है। यहाँ अेकने दूसरेको राम-कहानी कहना बुरा है। देखिये, मेरी रिस्टवॉच कोअी ले गया। पचास रुपयोंकी थी। परिश्रमके परिश्रम मिट्टीमे मिले और कालका व्यय व्यर्थही हो रहा है। मै, कितने बजते है या बजे, जानता नहींन? मगर यह रामकहानी मैं नहीं सुनानेवाला। लोगोंका आनन्द देना विचारवंतका काम है। लेकिन फुरसती है किसे? चिल्ला-चिल्ला कर गल्लीके बालबच्चे कुत्तेके समान सताते है रातदिन। सीधी नींन्द भी नहीं आती। उन बच्चोको डाँटे, तो मस्करीकी हिसाब वही बनाजाता हूँ। आजकल बच्चेको सीधा रास्ता बतानेवाला कोई नहीं। सब टेढीमेढी सिखाते हैं। इसीसे उनको किसीकी कदर नहीं। मेरे जैसे

जानकारीकी भी। जो हो, मैं रामकहानी किसीको नहीं सुनानेवाला। सिर्फ तुमकोही सुनाता है। तुम स्नेही हो न? मेरा दुख ही तुम्हारा क्या तुम्हारी माँ बीमार है। उसमें क्या? दुसरेको रामकहानी मत कहो। यह संसार मुखसे भरा है।

शालाकी कसौटी.

मातृभूमि वन्दना होनेके बाद दो पंक्तियोंमें बैठकर सब भाईबहनोंने चाअी पी और कुछ उपाहार भी लिया। मस्करीकी बाते ऊड रही थी। आस्ते आस्ते शान्ति हुअी। नाअिका आसनसे खडी हुअी बोली, " भाअी और बहनो, आप सब अिस अिन्दुमति-शिक्षणालयके बालबच्चो है। मै भी हूँ। अभिमानकी बात है। विद्यालयाके बाहर अपने अपने सामाजिक स्थानसे हरएक व्यक्ति अलग, अलग है मतभेदसे, पक्षभेदसे, धनभेदसे। पर जब हम सब सोचते हैं विद्यालयाकी दृष्टीसे तो सब भेदभाव अस्ताचल उतरता है। अेकही भावना प्रदीप्त होती है अेकताकी। दूसरी किसी शालामें नहीं यह कसौटी है अपनी शालाकी। विश्वविद्यालयकी परीक्षाअें और नियुक्त अभ्यासक्रम कसौटी मानते है सब। मगर अपना विद्यालय मानता है समाजकी अेकही कसौटी। अपना विद्यार्थी समाजमे कैसा पूत, भाअी, पति, पिता या पडौसी समझा जाता है और उनमेभी पहले दर्जेका कैसा, दूसरे दर्जेका कैसा- यह तपशीलवार नोंदनी करता है अपना विद्यालय। अपनी विद्यार्थिनी भी कैसी कन्या, बहन, पत्नी, माता या पडौसिनी होती है यह भी देखता है अपना विद्यालय। अिस नोंदनीसे विद्यालयको उजाला मिळता है आप छात्रगण अभिमानसे घूमते घूमते फिरते है, चाहे आप अमीर हो या फकीर।

मनकी कहानी.

जब दूरसे बोलना पडता है, तब सीधेसे सीधा साधन खत ही होता है । बन्दी–खानेसे रिश्तेदारोंको दिलके बोल देनेका खत ही अेक उपाय है । हाँ, जब बन्दीशाला मेरा राजभवन था तब कौटुंबिक कर्तव्यके बारेमें खतोंकी लिखापढी मेरी अेकही साधना थी । उसका असर मेरे रिश्तोदारोंके और औरभी लोगोंके मनपर बडा हुआ । तो उन लोगोंने मेरे खतोंसे अव्वल देखे गये दिलके बोल संग्रहित किये । जानकारीओंकी राय है कि वे नवजवानोंको उत्थापन देंगे । इसीवास्ते उनकी सेवामें पेश करतां हूँ ।

– पु. पां. गोखले.

प्रकाशक— सौ. सुलोचना गोखले, कऱ्हाड.

पुरुषोत्तम गोखले जी की किताबें

१	राष्ट्रभाषामे आगरकर	७५
२	अठराश्लोकी गीता (मराठी और हिंदी)	८१
३	अेकाध्यायी गीता (संस्कृत, मराठी, हिंदी, अंग्रेजी)	७५
४	गीताधर्म प्रवेश	८८
५	कर्मवीर सोमण	८४
६	मुजा मुलास	८१
७	शुभलग्न सावधान	८२
८	बोलबाला	८८
९	कालवाचक क्रीयापदें	८३
१०	परिचित सातारा	८५
११	जागृत सातारा	१
१२	आगरकर चरित्र	८८
१३	आगरकराशी ओळख	५
१४	दिलके बोल	८७

मुद्रक-- का. रा. नावडीकर,
श्रीदत्त प्रेस, कऱ्हाड.